RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18, अंक-2, मार्च अप्रैल मई 2025

रासो
त्रैमासिक शोध पत्रिका
2005
॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम् ॥

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18 अंक - 2 मार्च-अप्रैल-मई-2025

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** – पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** – प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** – प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** – पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** – पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** – सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** – पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** – आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** – पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

भारतीय ज्ञान परम्परा में भौतिकी के प्रमुख तत्वों की विवेचना

पिंकी सांखला
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

भारतीय ज्ञान परम्परा में प्राकृतिक घटनाओं की खोज, नियमों की पहचान तथा पदार्थ और ऊर्जा के स्वरूप का अध्ययन अत्यन्त प्राचीन है। वैदिक साहित्य में विश्व को एक सुव्यवस्थित, नियमबद्ध, ऊर्जा-प्रधान तंत्र के रूप में देखा गया है। इसीलिए वेदों में भौतिकी के अनेक आधुनिक सिद्धांतों के सूक्ष्म रूप मिलते हैं—जैसे ऊर्जा की अविनाशिता, अग्नि की सार्वत्रिकता, प्रकृति के गुण-धर्म, गति का सिद्धान्त, प्रकाश और उष्मा की कार्यशक्ति, ब्रह्माण्डीय संरचना, और पदार्थ-ऊर्जा के परस्पर रूपान्तरण की अवधारणा।

अग्नि-विद्या :- चारों वेदों में अग्नि को केवल देवता के रूप में ही नहीं, बल्कि ऊर्जा के सार्वत्रिक स्रोत के रूप में अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग से वर्णित किया गया है। अग्नि—उष्मा, प्रकाश, ताप, गति, परिवर्तन और क्रिया—सभी का प्रतिनिधि तत्व मानी गई। अग्नि को पदार्थ के रूपान्तरण का मूल कारण कहा गया, क्योंकि जहाँ अग्नि है, वहाँ ताप, प्रकाश, विकिरण, दहन, ऊर्जा और परिवर्तन है।

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में अग्नि को-विश्व का 'ऊर्जात्मक हृदय', सृष्टि का 'प्रथम प्रेरक', और 'सर्वव्यापी भौतिक शक्ति' कहा गया है।

वेदों में सैकड़ों मंत्र अग्नि के गुण, धर्म, क्रिया, व्यापकता, गति, और ऊर्जा-रूप के वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं। अग्नि को रूप बदलने वाली शक्ति बताया गया है, जो पदार्थ को विशिष्ट प्रक्रियाओं में बदलकर ऊर्जा और उष्मा में रूपान्तरित करती है। यह वैदिक दृष्टिकोण आधुनिक भौतिकी के ऊर्जा-संरक्षण सिद्धान्त और थर्मोडायनामिक्स से गहरे रूप में सामंजस्य रखता है।

यजुर्वेद में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक अवधारणा वर्णित है—

''ऊर्जा नष्ट नहीं होती, वह केवल रूप बदलती है।''

यह आधुनिक भौतिकी के 'Law of Conservation of Energy' का वैदिक स्वरूप है। यजुर्वेद कहता है कि अग्नि—जो ऊर्जा का प्रतिरूप है—अक्षय और अमर है।

वेदमंत्र कथन— 'अग्नि अक्षय और अमर है; यह नश्वर जगत् में अमर रूप से स्थित रहता है।'

इस अमरत्व का कारण बताया गया है कि ऊर्जा में 'वयस्' नामक शक्ति या नित्य गतिशील बल है। वयस् वह सूक्ष्म ऊर्जा-तत्त्व है जो अग्नि को न सत् से असत् होने देता है, न असत् से शून्य में विलीन

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

होने देता है।

अर्थात् ऊर्जा का हर रूप– प्रकाश, ताप, घर्षण, दहन, विकिरण, विद्युत, गतिज और स्थितिज ऊर्जा सभी निरन्तर रूपान्तरित होते रहते हैं, किंतु नष्ट नहीं होते। यह आधुनिक विज्ञान के ऊर्जा-नियम से अद्भुत रूप से मेल खाता है।

वेद का स्पष्ट कथन–

'मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि।'

अर्थात् - नश्वर देहों और नश्वर जगत् में रहने पर भी अग्नि (ऊर्जा) अमर और अनश्वर है।

दूसरे मंत्र में कहा गया–

'अग्निरमृतो अभवत् वयोभिः।'

अर्थात् - अग्नि अपने वयस् (ऊर्जा-त्व) के कारण अमर है।

ये वाक्य सीधे-सीधे यह स्थापित करते हैं कि ऊर्जा कभी समाप्त नहीं होती; वह केवल रूप बदलती है।

वयस् (Velocity) :- वेदों में 'वयस्' शब्द का प्रयोग ऊर्जा की गतिशीलता, स्पन्दन, कंपन और शक्ति को सूचित करने के लिए किया गया है। आधुनिक भौतिकी में 'वेलोसिटी ', 'फ्रीक्वेन्सी' और 'क्वांटम कंपन' को जिस प्रकार भौतिक ऊर्जा का मूल माना जाता है, उसी के समानार्थक 'वयस्' वेदों में पाया जाता है।

वयस् का अर्थ– 'ऊर्जा के अस्तित्व का अनिवार्य, निरन्तर, अविनाशी स्पन्दन।'

जहाँ वयस् है, वहाँ ऊर्जा है; जहाँ ऊर्जा है, वहाँ परिवर्तन है। यही सिद्धान्त आज 'Energy = constant × frequency' (क्वांटम सिद्धान्त) में भी अभिव्यक्त होता है।

अग्नि की सार्वत्रिकता :– वेद बताते हैं कि अग्नि केवल लौ नहीं है, बल्कि सूर्य में तेज, चन्द्रमा में शीतांश, वज्र में विद्युत, वायु में घर्षण-ऊर्जा, जल में उष्मा, पृथ्वी में अंत: ऊष्मा, प्राणियों में जैव-ऊर्जा, मन में विद्युत-चुम्बकीय तरंगें, सभी अग्नि-तत्त्व का ही रूप हैं।

यह दृष्टिकोण आधुनिक विज्ञान के अनुसार ऊर्जा के thermal, chemical, kinetic, electrical, radiant आदि सभी रूपों के एकत्व से मेल खाता है।

दहन और रूपान्तरण का वैदिक सिद्धान्त :- अग्नि को पदार्थ का 'उपशोषक' और 'रूपान्तरक' बताया गया है। वैदिक ऋषि समझते थे कि पदार्थ अपने गुण बदलते हुए विभिन्न अवस्थाओं–ठोस, द्रव्य, वायु में परिवर्तित होता है, और इस परिवर्तन में अग्नि-तत्त्व की प्रमुख भूमिका है।

यह आधुनिक भौतिकी के Phase Transitions, Thermodynamics, Chemical Reactions से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित है।

वेदों में प्रकाश :- वेदों में सूर्य को 'सविता ', 'प्रकासक', 'ऊर्जा-स्रोत', 'विश्वचक्षु' कहा

गया है। सूर्य की किरणों को सप्त-रश्मि कहा गया—जो आधुनिक विज्ञान में सात वर्णों के रूप में स्वीकार किए जाते हैं।

अग्नि की रश्मियों, उनके गति-स्वरूप, तथा उनके द्वारा उत्पन्न उष्णता और प्रकाश की क्रिया का वर्णन भौतिक प्रकाश-विद्या (Optics) के मूल सिद्धांतों से जुड़ा है।

ऊर्जा का रूपान्तरण (Transformation of Energy) : भारतीय वैदिक परम्परा में ऊर्जा को सृष्टि का मूलभूत और सर्वव्यापक तत्त्व माना गया है। वेदों की दृष्टि में 'अग्नि' केवल लौ, ताप या दहन का प्रतीक नहीं, बल्कि वह सार्वत्रिक ऊर्जा-तत्त्व का प्रतीक है जो विश्व के प्रत्येक कण में, प्रत्येक गति में, प्रत्येक परिवर्तन में और प्रत्येक रूप में अंतर्निहित है। इसी कारण वेदों में बार-बार यह कहा गया है कि अग्नि—जिसे वे Energy अर्थात् ऊर्जा कहते हैं—वास्तव में एक ही है, परंतु उसके रूप, नाम और कार्य असंख्य हैं। यही ऊर्जा जब शब्द के रूप में प्रकट होती है तब ध्वनि बनती है, जब रूप के रूप में प्रकट होती है तब प्रकाश बनती है, जब गति में रूपान्तरित होती है तब चलन और शक्ति उत्पन्न करती है, और जब ताप के रूप में अवतरित होती है तब उष्मा बन जाती है। इसीलिए वेद कहते हैं कि एक ही ऊर्जा रूपान्तरित होकर विविध नामों से पहचानी जाती है।

वेदों में इस ऊर्जा-तत्त्व की रूपान्तरशीलता को अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग से व्यक्त किया गया है। यह परिवर्तनशीलता, जो आधुनिक विज्ञान में Energy Transformation या Conservation of Energy के नाम से जानी जाती है, वैदिक ऋषियों की भाषा में 'पुरुरूपता' कहलाती है। पुरुरूप का अर्थ है वह शक्ति जो अपने एक ही मूल स्वरूप से असंख्य रूप धारण कर लेती है। अग्नि को पुरुरूप कहने का तात्पर्य यही है कि वह कभी ताप बनती है, कभी प्रकाश बनती है, कभी कंपन बनती है, कभी गतिशक्ति बनती है और कभी विद्युत या प्राण-बल के रूप में कार्य करती है। यही कारण है कि वेद उसे विश्वकर्मा भी कहते हैं—विश्व में कार्य करने वाली, विश्व को गति देने वाली और सृष्टि के प्रत्येक क्रिया व्यापार की मूल प्रेरणाशक्ति।

ऊर्जा की यह रूपान्तरित होने की शक्ति केवल उसका गुण ही नहीं, बल्कि उसका स्वभाव माना गया है। वेद यह कहते हैं कि ऊर्जा की संख्या असंख्य है, उसका प्रकल्पन बहुविध है, और उसके समूह या पुंज निरन्तर गतिशील रहते हैं। इस संदर्भ में उसे संहत् कहा गया है, जिसका अर्थ है—पुंजीभूत, समूहगत, तरंगित और सहसमूह में प्रवाहित होने वाली शक्ति। यह वर्णन आधुनिक क्वांटम सिद्धान्तों की उन धारणाओं के समान है जिनमें कहा गया है कि ऊर्जा कणों और तरंगों के समूह (energy packets) के रूप में प्रवाहित होती है।

वेदों में ऊर्जा के परिमाण को भी प्रतीकात्मक रूप से व्यक्त किया गया है। ऊर्जा के लिए 'शतिन्' और 'सहस्त्रिन्' शब्द प्रयुक्त हुए हैं। शतिन् का अर्थ है सौ-गुणित शक्ति और सहस्त्रिन् का अर्थ है हजार-गुणित शक्ति। यह उस वैदिक परम्परा का संकेत है जहाँ ऊर्जा की मात्राओं को अश्वशक्ति और बल-प्रतीकों के द्वारा समझाया गया। शतिनं पुरुरूपम् इस बात को सूचित करता है कि ऊर्जा शत-बलयुक्त होकर अनेक रूप धारण करती है। इसी प्रकार 'अग्ने बृहतो दा: सहस्त्रिण:' यह बताता है कि अग्नि सहस्र-बलयुक्त, महाशक्तिशाली और अत्यधिक कार्यक्षम है। वेदों की दृष्टि में इतनी तीव्र, पुंजीभूत और महाबलशक्ति ही जगत् को गति देने में समर्थ है।

ऊर्जा को वैदिक ऋषियों ने 'ऊर्जापति' और 'सहस: सूनु:' भी कहा है। यह नाम अत्यन्त गम्भीर दार्शनिक और भौतिकार्थ रखता है। सहस: सूनु: का अर्थ है—ऊर्जा का पुत्र, अर्थात् वह शक्ति जो ऊर्जा से उत्पन्न होकर ऊर्जा ही का विस्तार करती है। ऊर्जापति का अर्थ है—ऊर्जा का स्वामी, वह तत्त्व जो ऊर्जा के विविध रूपों को नियंत्रित करता है, दिशा देता है और उन्हें जगत् के संचालन में लगाता है। यह संकेत उस वैदिक दृष्टिकोण का है जिसमें ऊर्जा को केवल घटनाओं का परिणाम नहीं माना गया, बल्कि एक मौलिक, सृजनशील और प्रेरक शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया।

इस प्रकार वेदों में ऊर्जा को एक ही मूलसत्ता माना गया है जो रूप बदल-बदलकर जगत् में प्रस्फुटित होती है। यही ऊर्जा विश्वरूप है क्योंकि उसमें समस्त रूप समाहित हैं, और वही पुरुरूप है क्योंकि वह अपनी एकता के भीतर से असंख्य विविधताएँ प्रकट करती है। वैदिक ऋषियों ने ऊर्जा को सतत रूपान्तरणशील, सतत गतिशील, सतत कार्यशील और सतत अमर सत्ता के रूप में समझा। आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से देखें तो यह वर्णन ऊर्जा के संरक्षण, ऊर्जा के रूपान्तर, ऊर्जा-बल-गति के सम्बन्ध और तरंग-कण-गतिशीलता के सिद्धांतों से अत्यन्त साम्य रखता है।

वास्तव में, वैदिक भौतिक-दृष्टि में ऊर्जा एक ऐसी शक्ति है जिसकी कोई सीमा नहीं, जो नष्ट नहीं होती, केवल रूप बदलती है; जो समूह रूप में भी विद्यमान है और सूक्ष्म एकक के रूप में भी; जो अनेक नामों से जानी जाती है, किंतु अपने वास्तविक स्वरूप में एक ही है; और जो विश्व की प्रत्येक गति, प्रत्येक घटना, प्रत्येक परिवर्तन और प्रत्येक स्वरूप का आधार है।

वैश्वानर अग्नि : वेदों में यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित है कि विश्व की प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक कण और प्रत्येक सूक्ष्म रचना में ऊर्जा विद्यमान है। इस सार्वभौमिक ऊर्जा को ऋषियों ने 'वैश्वानर अग्नि' कहा है। वैश्वानर शब्द का अर्थ है—वह अग्नि जो 'विश्व में व्यापी', 'विश्व को धारण करने वाली' और 'विश्व की समस्त वस्तुओं में समान रूप से विद्यमान' है। वैदिक दृष्टि में अग्नि केवल लौ, ताप या दाह नहीं, बल्कि वह ऊर्जा है जो ब्रह्माण्ड के अस्तित्व और उसकी गति का मूलाधार है। इसी कारण वेद कहते हैं कि विश्व के प्रत्येक Molecule अर्थात् प्रत्येक कण में यह Energy अर्थात् ऊर्जा-सत्ता विद्यमान है। यह ऊर्जा संसार के निर्माण की जननी है, इसलिए ऋषियों ने इसे सृष्टि का उत्पादक और सृष्टि का कर्ता कहा है।

वैश्वानर अग्नि को वेदों में संसार का केन्द्र कहा गया है। वैदिक भाषा में यह केन्द्र (Centre) के रूप में व्यक्त किया गया है, जिसका अभिप्राय है कि विश्व की समस्त गतिविधियाँ इसी ऊर्जा-स्रोत से संचालित होती हैं। यह केन्द्र भौगोलिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक-भौतिक है। यह वह शक्ति-केन्द्र है जहाँ से सृष्टि की गति, प्रकाश, ताप, कंपन, आकर्षण और क्रियाशीलता नियंत्रित होती है।

वेद ऊर्जा की इस सर्वव्यापक सत्ता को आकर्षण-शक्ति (Magnetism) से युक्त बताते हैं। ऋषियों का कहना है कि वैश्वानर अग्नि पूरे संसार को अपने आकर्षण में बाँध कर रखती है। यह आकर्षण केवल दार्शनिक नहीं, भौतिक अर्थ में भी महत्त्वपूर्ण है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार गुरुत्वाकर्षण, विद्युतचुंबकीय आकर्षण, नाभिकीय आकर्षण—ये सभी शक्तियाँ ऊर्जा-क्षेत्रों के परस्पर सम्बन्धों का परिणाम हैं। इसी प्रकार वेद कहते हैं कि वैश्वानर अग्नि की ऊर्जा अपनी शक्ति और आकर्षण से विश्व-व्यवस्था को

बाँधती, साधती और संचालित करती है।

वेदों में वैश्वानर अग्नि की गति और शक्ति को 'शतिनीभि:' कहा गया है। इसका तात्पर्य यह है कि इसकी ऊर्जा सैकड़ों प्रकार की गतियों से सम्पन्न है। कभी यह प्रकाश-तरंगों के रूप में तीव्र गति से प्रवाहित होती है, कभी ध्वनि-तरंगों के रूप में कंपन उत्पन्न करती है, कभी ताप बनती है, कभी विद्युत बनती है, कभी जैव-ऊर्जा में परिवर्तित होती है, और कभी गति और बल का रूप धारण कर पदार्थ को चलाती है। ऋषियों ने ऊर्जा की इस विविधगति को ही वैश्वानर की महिमा कहा है।

वैश्वानर अग्नि केवल सूर्य की किरणों में ही नहीं, बल्कि वनस्पतियों, वृक्षों, औषधियों, जल, समुद्र, वायु, पृथ्वी और मानव-शरीर तक में निवास करती है। वेदों में वर्णन मिलता है कि सूर्य से प्रवाहित होने वाली ऊर्जा पृथ्वी पर जीवन की जननी है; यह ऊर्जा वनस्पतियों में प्राणरूप से कार्य करती है; जल में शीतल शक्ति के रूप में रहती है; समुद्र में लहरों की गति में गुंजित होती है; और मानव-शरीर में प्राणशक्ति, ऊष्मा, चेतना और जीवन-गति के रूप में संचालित होती है। वैश्वानर को राजा कहा गया है क्योंकि वही संपूर्ण विश्व-व्यवस्था का नियामक है।

वेदों के मन्त्र भी यही प्रतिपादित करते हैं। 'वैश्वानरो विश्वकृत्' इस तथ्य की घोषणा है कि यह विश्वव्यापी अग्नि ही समस्त विश्व की कर्ता है, वही विश्व-व्यवस्था की संरचना करती है। 'वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनाम्' यह दर्शाता है कि यह अग्नि समस्त पृथ्वियों या जगतों का नाभिक या केन्द्र-बिन्दु है। 'वैश्वानरो महिम्ना विश्वकृष्टि:' यह सूचित करता है कि सृष्टि की महत्ता, व्यवस्था, गति और विस्तार वैश्वानर की शक्ति और महिमा से ही संभव है। 'आ सूर्ये... ओषधीष्वप्सु मानुषेषु राजा' इस कथन में यह स्पष्ट किया गया है कि सूर्य से लेकर वनस्पतियों तक, जल से लेकर मनुष्यों तक, सभी में यही वैश्वानर ऊर्जा राजा के समान शासन करती है, सभी को अपने प्रभाव में रखती है और सबका जीवन-स्रोत बनती है।

इस प्रकार वैश्वानर अग्नि वैदिक विज्ञान में वह सार्वभौमिक ऊर्जा है जो सृष्टि की रचना, उसका विस्तार, उसकी गति और उसके जीवन का आधार है। वह विश्व का केन्द्र है, विश्व का आकर्षण है, विश्व का कर्ता है, विश्व का धारक है और विश्व का प्राण है। वैदिक ऋषियों की दृष्टि में वैश्वानर अग्नि ही ब्रह्माण्ड का वास्तविक स्पंदन, वास्तविक ऊर्जा-क्षेत्र और वास्तविक जीवन-तत्त्व है।

अग्नि का विराट् रूप

ऊर्जा के विभिन्न नाम :- वेदों में अग्नि केवल लौ या दहन का प्रतीक नहीं है, बल्कि व्यापक अर्थ में वह ऊर्जा का रूप है—ऐसी ऊर्जा, जो समस्त सृष्टि में व्याप्त है, उसे चलायमान रखती है, उत्पन्न करती है, परिवर्तित करती है और अन्तत: समेट भी लेती है। इसी कारण वेदों में अग्नि को विराट्, सर्वव्यापी और सर्वरूप कहा गया है।

ऋग्वेद का मन्तव्य है कि सभी देवस्वरूप वास्तव में ऊर्जा (अग्नि) के ही विभिन्न रूप हैं। देवताओं के नाम विशिष्ट कार्य, गुण और प्रभाव के आधार पर उत्पन्न हुए हैं; पर उनमें सक्रिय शक्ति एक ही है—अग्नि-तत्त्व, अर्थात ऊर्जा।

ऊर्जा जब सृजन करती है तो ब्रह्मा कहलाती है, जब धारण और पोषण करती है तो विष्णु के नाम से जानी जाती है, और जब संहार या रूपान्तर करती है तो रुद्र का रूप धारण करती है। यही ऊर्जा सामाजिक-

नैतिक व्यवस्था की संरक्षिका बनकर मित्र, वरुण, अर्यमा और त्वष्टा रूप में प्रतिष्ठित होती है। तूफानों की तीव्रता में वह मरुत् है और जीवों के पोषण में पूषा बनकर कार्य करती है।

इसी प्रकार ऊर्जा स्त्री-देवियों के रूप में भी वर्णित है। वह अदिति है—अनन्त, अपरिमित और सर्वसमावेशी; वह इडा है—कल्याणकारी, पोषक और सोम-ऊर्जा की वाहिका; वह भारती है—प्रेरक शक्ति; और वह सरस्वती है—प्रवाहमान, प्रज्ञा और चेतना की वाहक। इन सबमें मूल सक्रिय शक्ति अग्नि ही है, जो विभिन्न कार्य-रूपों में नाना नामों से पहचानी जाती है।

इस प्रकार वेदों के अनुसार अग्नि किसी एक क्रिया या पदार्थ का नाम नहीं, बल्कि सार्वभौमिक ऊर्जा-तत्त्व है, जो ब्रह्माण्ड के भीतर मुखर होकर अनगिनत देव-देवी रूपों में प्रकट होता है। अग्नि के इसी विराट्, व्यापक और सर्वरूप स्वरूप की पुष्टि वेदों के मन्त्रों में इस प्रकार की गई है—

(क) त्वमग्न इन्द्रः, त्वं विष्णुः, त्वं ब्रह्मा.।

(ख) त्वं वरुणः, त्वं मित्रः त्वम अर्यमा.।

(ग) त्वं रुद्रः, त्वं मारुतं, त्वं पूषा0।

(घ) त्वम् अदितिः, त्वं भारती, त्वम् इडा, त्वं सरस्वती।

ऊर्जा व्यक्त और अव्यक्त, स्थूल और सूक्ष्म : वेदों में ऊर्जा (अग्नि) के स्वरूप का अत्यन्त गहन और दार्शनिक वर्णन मिलता है। यह ऊर्जा मूलतः अव्यक्त, अदृश्य और सूक्ष्म रूप में विद्यमान रहती है। अपने अप्रकट रूप में वह संसार के हर कण में, प्रत्येक पदार्थ के भीतर, प्रकृति की प्रत्येक परत में छिपी हुई है। इसी कारण वेदों ने इसे 'गुहा सन्तम्' अर्थात् गुप्त, भीतरी कक्षों में स्थित—कहा है। इसी प्रकार 'गह्वरेष्ठा' शब्द भी इस ऊर्जा की उसी गहन, अदृश्य और रहस्यमय उपस्थिति को बताता है। यह ऊर्जा केवल सूक्ष्म ही नहीं, बल्कि स्थूल रूप में भी प्रकट होती है। जब यह गति, प्रकाश, ऊष्मा, कंपन या परिवर्तन के रूप में बाहर आती है, तब यह मूर्त हो जाती है। जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु—इन सबके विविध रूपों में यह स्थूल ऊर्जा के रूप में व्यक्त होती है।

वेदों का मत है कि यह ऊर्जा कहीं वृक्षों में रसधारा के रूप में छिपी है, कहीं भूगर्भ में खनिज-तत्त्वों और ताप-ऊर्जा के रूप में स्थित है, कहीं समुद्र की लहरों और जल-धारण-शक्ति में निहित है। जब परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं—जैसे घर्षण से तो यही अप्रकट ऊर्जा बाह्य रूप में प्रकट होकर अग्नि के रूप में दिखाई देती है।

अतः वेदों का सार यह है कि ऊर्जा सर्वत्र विद्यमान है—कभी व्यक्त, कभी अव्यक्त; कभी स्थूल, कभी सूक्ष्म; कभी मूर्त, कभी अमूर्त। इसी सर्वव्यापकता और विविधता के कारण अग्नि (ऊर्जा) को वेदों में अनेक उपमाओं और नामों से पुकारा गया है।

वेदमन्त्रों में इसी सत्य को इस प्रकार व्यक्त किया गया है—

(क) त्वं वनेभ्यः ... जायसे शुचिः — तू वनस्पतियों में अप्रकट रूप से जन्म लेता है।

(ख) त्वामग्ने .. गुहा सन्तम् — तू भीतर छिपा हुआ, गहन स्थानों में स्थित है।

(ग) या ते अग्ने .. तनूः .. गह्वरेष्ठा — तेरी कुछ तनुएँ (रूप) गहरे, अप्रकट स्थानों में स्थित रहती

हैं।

ऊर्जा सर्वव्यापक है : भारतीय ज्ञान परम्परा में ऊर्जा (अग्नि) को केवल एक भौतिक शक्ति नहीं, बल्कि सृष्टि का आधार, गति का मूल कारण, और विश्व-चेतना का केन्द्र माना गया है। वेदों में यह स्पष्ट कहा गया है कि ऊर्जा किसी एक स्थान पर सीमित नहीं है; वह द्युलोक (आकाशीय क्षेत्र), अन्तरिक्ष (मध्य लोक) और भूमि (पृथ्वी) — इन तीनों लोकों के प्रत्येक कण में पूर्ण रूप से व्याप्त है।

ऊर्जा की यह सर्वव्यापकता ही सृष्टि में निरंतर होने वाली गति, स्थिति, तथा परिवर्तन का मूल कारण है। गति तभी सम्भव है जब ऊर्जा प्रवाहित होती है; स्थिति तभी टिकती है जब ऊर्जा संतुलित हो; और परिवर्तन तभी होता है जब ऊर्जा अपना स्वरूप बदलकर कार्य करती है। वेद इन वैज्ञानिक सिध्दान्तों को अत्यन्त सूक्ष्म प्रतीकों में व्यक्त करते हैं।

अग्नि — जो वेदों में ऊर्जा का प्रतीक है, को 'विश्व की चेतना' कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि सृष्टि में जो भी सक्रियता, संवेदना, समन्वय और प्राकृतिक नियम दिखाई देते हैं, वे इसी ऊर्जा की बौद्धिक, सूक्ष्म और व्यापक शक्ति का परिणाम हैं। अग्नि को विश्व की गति का केन्द्र इसलिए कहा गया कि समूचे ब्रह्माण्ड की लय, गति, कंपन और परिवर्तन इसी मूल ऊर्जा-स्रोत से पोषित होते रहते हैं।

वेदमन्त्र इस सत्य को अत्यन्त सुंदर रूप से व्यक्त करते हैं—

— विश्वस्य केतुः, भुवनस्य गर्भः, आ रोदसी अपृणात् — अग्नि समस्त विश्व का प्रकाश-चिन्ह, ब्रह्माण्ड का गर्भ है; वही द्युलोक और पृथ्वी दोनों को व्याप्त कर लेता है।

— आ रोदसी भानुना भात्यन्तः — उसके तेज और प्रकाश से आकाश और पृथ्वी दोनों भीतर तक आलोकित हैं।

अग्नि में विद्युत-तरंगें :- भारतीय ज्ञान-परम्परा में अग्नि केवल दहन-शक्ति नहीं, बल्कि ऊर्जा के समस्त रूपों का प्रतीक है। ऋग्वेद में अग्नि का जो वर्णन मिलता है, वह आधुनिक विज्ञान के अनेक सिद्धान्तों—विशेषतः विद्युत-तरंगों से अत्यन्त समीप प्रतीत होता है।

वेद कहते हैं कि अग्नि 'अतितीव्रगामी' है, जिसका अर्थ है कि उसकी शक्ति और उसकी तरंगें अत्यन्त तीव्र वेग से संचरित होती हैं। आधुनिक विज्ञान जिस गुण को विद्युत-चुंबकीय तरंगों का मूल मानता है अर्थात् उनका प्रकाश-वेग से गमन—वेद उसी को सूक्ष्म रूपक में अग्नि के 'अमर दूत' होने के रूप में व्यक्त करता है।

वेद यह भी कहते हैं कि ऊर्जा की तरंगें समुद्र की लहरों के समान निरंतर, तरंगित और तीव्र प्रवाह वाली हैं। जैसे समुद्र की लहरें अनवरत उठती-गिरती हुई दूर तक फैलती जाती हैं, उसी प्रकार ऊर्जा की तरंगें भी कंपनशील, गतिमान और तीव्रता से प्रवाहित होती रहती हैं।

इसी सत्य को ऋग्वेद के मन्त्र रूपक के माध्यम से इस प्रकार कहता है—

— जीरं दूतम् अमर्त्यम् — अग्नि (ऊर्जा) वृद्धिहीन, न क्षय होने वाली, अमर और अत्यन्त तीव्रगति से चलने वाला दूत है।

— सिन्धोरिव ऊर्मयः, अग्नेर्भाजन्ते अर्चयः — अग्नि की किरणें और तरंगें समुद्र की लहरों के समान

तीव्र, उफनती हुई और दूर तक फैलने वाली हैं।

विद्युत् में श्रवण शक्ति :- वेदों ने ऊर्जा (अग्नि) को केवल प्रकाश या ऊष्मा का स्रोत नहीं माना, बल्कि उसे सूचना-वहन, संवाद-प्रेषण, और श्रवण-शक्ति का आधार भी बताया है। ऋग्वेद और यजुर्वेद में आने वाले अनेक शब्द—जैसे श्रुत्कर्ण, वह्नि, श्रवो वय: स्पष्ट संकेत देते हैं कि वैदिक ऋषियों ने ऊर्जा में ध्वनि और सूचना के संचार को एक मूलभूत गुण के रूप में पहचाना था।

ऋग्वेद में 'श्रुत्कर्ण' शब्द का प्रयोग हुआ है। यह पद बताता है कि ऊर्जा (विद्युत्) के माध्यम से श्रवण-संदेश दूर तक पहुँचा सकते हैं, अर्थात् ध्वनि-तरंगें ऊर्जा पर सवार होकर यात्रा कर सकती हैं। आधुनिक विज्ञान में यही सिद्धान्त टेलीफोन, टेलीग्राफ, रेडियो और वायरलेस प्रणाली का आधार है—ध्वनि को विद्युत-तरंगों पर रूपान्तरित कर दूर भेजा जाता है।

वेद मंत्र में प्रयुक्त शब्द 'वह्नि' का अर्थ केवल अग्नि नहीं, बल्कि वहन-शक्ति, यानी ले जाने की क्षमता है। इससे यह संकेत मिलता है कि ऊर्जा में केवल शक्ति नहीं, बल्कि संदेश ले जाने की क्षमता भी है।

यजुर्वेद में इसी विषय को और स्पष्ट करते हुए 'श्रवो वय:' कहा गया है—अर्थात् ऊर्जा की तरंगों में श्रवण कराने की गति, ध्वनि-संचार की सामर्थ्य।

शतपथ ब्राह्मण में इन मंत्रों की व्याख्या करते हुए यह कहा गया है कि अग्नि (विद्युत्-ऊर्जा) की इस सूक्ष्म तरंग-शक्ति के द्वारा दूर देशों में भी शब्द और संदेश सुनाए जा सकते हैं। यह विज्ञान आज रेडियो-तरंगों, वायरलेस संचार और इलेक्ट्रॉनिक संवाद की मूलभूत प्रक्रिया है।

वेदों में यह विचार इस प्रकार व्यक्त हुआ है—

— **श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिः** अर्थात् हे ऊर्जा! तू श्रवण कराने वाली तरंगों को वहन करती है।

— **अग्ने तव श्रवो वयो महि भ्राजन्ते अर्चय:** अर्थात् तेरी तरंगें, हे ऊर्जा, दूर तक प्रकाशित और श्रवण कराने वाली हैं।

— **घूमो वा अग्नेः श्रवो वयः...** स हि एनम् अमुष्मिन् लोके श्रावयति अर्थात् यह तरंग दूर स्थित लोक में भी शब्द का संप्रेषण कर देती है।

इन मंत्रों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि वैदिक ऋषियों ने ऊर्जा को सूचना-परिवहन की माध्यम शक्ति के रूप में समझा। आधुनिक शब्दों में कहें तो यह इलेक्ट्रोमैग्नेटिक वेव्स की अवधारणा है, जो आज रेडियो, टेलीफोन, टीवी प्रसारण, इंटरनेट सिग्नल—सभी का आधार बन चुकी है।

अथर्वा ऋषि :- भारतीय ज्ञान-परम्परा में अथर्वा ऋषि को 'विश्व का प्रथम वैज्ञानिक' कहा गया है, क्योंकि उन्होंने अग्नि और ऊर्जा से सम्बद्ध ऐसे आविष्कार किए, जिन्होंने मानव-सभ्यता को मूलभूत विज्ञान प्रदान किया। ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद तीनों में उनके वैज्ञानिक अनुसंधानों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। अग्नि को प्राप्त करने और नियंत्रित करने की विधियाँ, पदार्थों की संरचना की पहचान, तथा ऊर्जा के उपयोग की कला—इन सबका प्रथम औपचारिक आविष्कार अथर्वा को माना गया है।

(1) वृक्ष आदि से अग्नि का आविष्कार :- अथर्वा ऋषि का प्रथम महान् आविष्कार था —

'अरणि नामक वृक्ष की लकड़ियों को घर्षण द्वारा अग्नि उत्पन्न करने की विधि'। यह मानव-इतिहास में ऊर्जा के नियंत्रित उपयोग की सबसे पुरानी, सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक तकनीक मानी गई है।

ऋग्वेद और यजुर्वेद दोनों में यह उल्लेख मिलता है कि अथर्वा ने मन्थन (घर्षण) से अग्नि उत्पन्न की। इस अग्नि को यज्ञीय अग्नि की मूलधारा का प्रारम्भ माना गया, और कहा गया कि अथर्वा के पुत्र दधीचि ऋषि ने ही इसका प्रथम यज्ञीय प्रयोग किया।

वेदों का कथन इस प्रकार है–

– अथर्वा त्वा प्रथमो निरमन्यद् अग्रे – अथर्वा ने प्रारम्भ में ही तुझे (अग्नि को) प्रकट किया।

– तमु त्वा दध्यङ् ऋषिः पुत्र ईधे अथर्वणः – उसके पुत्र दधीचि ऋषि ने इसका प्रयोग यज्ञ में किया।

ऋग्वेद में विभिन्न स्थानों पर अथर्वा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है, जिससे स्पष्ट है कि वे अग्नि-विद्या के अग्रणी प्रयोगकर्ता थे (ऋग्वेद 1.80.16; 1.83.5; 9.11.2 आदि)।

ऋग्वेद बताता है कि अग्नि स्वयं अरणि की लकड़ियों में अव्यक्त रूप में स्थित है–

– **अरण्योर्निहितो जातवेदाः** – अग्नि अरणि-वृक्षों में सुप्त रूप से स्थित है।

– **नवं जनिष्टा अरणी** – अरणि को घर्षित करने पर नयी अग्नि जन्म लेती है।

– **अग्निं मन्थाम पूर्वथा** – हम पुरातन पद्धति से अग्नि का मन्थन करते हैं।

इससे यह वैज्ञानिक सिद्धान्त स्पष्ट होता है कि अग्नि (ऊर्जा) पदार्थ के भीतर निहित रहती है और घर्षण से ही प्रकट होती है–बिल्कुल आधुनिक विज्ञान के उस सिद्धान्त की भाँति कि यांत्रिक ऊर्जा के रूपान्तरण से ऊष्मा उत्पन्न होती है।

ऋग्वेद में यह भी उल्लेख है कि दो पत्थरों को रगड़कर भी अग्नि प्राप्त की जा सकती है–

– **यो अश्मनोः अन्तर्अग्निं जजान** – जिसने दो पत्थरों के बीच से अग्नि उत्पन्न की।

यह पंक्ति मानव इतिहास की उस प्राचीन वैज्ञानिक क्रिया की ओर संकेत करती है जिसमें चकमक पत्थरों की टक्कर से चिंगारियाँ उत्पन्न होती हैं।

(2) जल के मन्थन से अग्नि :- अथर्वा ऋषि के वैज्ञानिक कार्यों में दूसरा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अविष्कार है – जल के मन्थन से अग्नि, जिसे वैदिक भाषा में 'अप्सु अग्नि' या 'जलीय विद्युत्' कहा गया है। यह विचार आधुनिक विज्ञान के उस सिद्धान्त से बिल्कुल साम्य रखता है कि जल में विद्युत्-ऊर्जा निहित होती है तथा उचित प्रक्रियाओं से उसमें से ऊर्जा मुक्त की जा सकती है–जैसे इलेक्ट्रोलिसिस या जलीय घर्षण से उत्पन्न विद्युत्।

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और तैत्तिरीय संहिता–सभी में स्पष्ट उल्लेख है कि अथर्वा ऋषि ने तालाब (पुष्कर) के जल से मन्थन (घर्षण) करके अग्नि की प्राप्ति की।

वेद यह कहते हैं– **'त्वामग्ने पुष्करादधि अथर्वा निरमन्धत'** – हे अग्नि! अथर्वा ऋषि ने तुझे तालाब के जल से मन्थन द्वारा उत्पन्न किया।

यह कथन संकेत करता है कि ऋषियों ने जल में छिपी ऊर्जा या विद्युत् के प्रथम रहस्य को समझा था। जल का घर्षण, जलीय धारा, जल-वाष्प और संचित ऊष्मा। ये सब आधुनिक भौतिकी में ऊर्जा-उत्पादन की मूलभूत प्रक्रियाएँ हैं। वैदिक वर्णन इन वैज्ञानिक प्रक्रियाओं का प्राचीनतम रूप माना जा सकता है।

खानों में अग्नि :- अथर्ववेद में कोयले, धातुओं और खनिजों की खानों का उल्लेख मिलता है। इन खानों में विद्यमान अग्नि, जो आज माइनिंग फायर या कार्बन-संचित ऊष्मा कही जाती है, का विस्तृत एवं वैज्ञानिक विवरण मिलता है। वेद इसे— म्रोक (विनाशकारी), मनोहा (दम घुटाने वाली गैसें), निर्दाह (जलाने वाली), तनूषि (शरीर को क्षति पहुँचाने वाली), घोरम् (अत्यन्त भयावह) इन शब्दों से वर्णित करते हैं।

यह विवरण आधुनिक खानों में पाए जाने वाले— मीथेन गैस विस्फोट, कार्बन मोनोऑक्साइड से दम घुटना, भूमिगत गर्मी, कोयले की स्वत:-दहन क्रिया इन वैज्ञानिक घटनाओं से पूर्ण सामंजस्य रखता है।

समुद्री अग्नि : - अथर्ववेद में एक और अद्‌भुत वैज्ञानिक संकेत है कि समुद्र में भी अग्नि (ऊर्जा) व्याप्त है। आज विज्ञान इसे समुद्री ज्वालामुखी, पानी के भीतर ताप-स्राव, जल में घुली विद्युत-ऊर्जा और भू-तापीय ऊर्जा के रूप में पहचानता है।

वेद कहते हैं—

— **अपाम् अग्रम् असि समुद्रं वोऽभ्यवसृजामि** — समुद्रों में भी अग्नि का मूल तत्त्व विद्यमान है।

— **यो वा आपोऽग्निराविवेश घोरं तदेत्** — जो अग्नि जलों में प्रवेश करती है, वह घोर भी है।

— **शिवान् अग्नीन् अप्सुसदः** — और वही जल-निवासी अग्नि कभी शांत और कल्याणकारी भी होती है।

यह दो प्रकार की ऊर्जा का सूचक है—

* **घोर** — जैसे समुद्री ज्वालामुखी, जल-ताप स्रोत, उग्र भू-ऊर्जा

* **शिव** — जैसे समुद्री ऊष्मा, तापीय धाराएँ, पोषक ऊर्जा-प्रवाह

इस प्रकार अथर्वा ऋषि ने अग्नि-तत्त्व को केवल स्थल तक सीमित नहीं माना; उन्होंने 'वृक्षों में, जल में, पत्थरों में, खानों में और समुद्रों में' ऊर्जा के विभिन्न रूप खोजे। यह ऊर्जा-विज्ञान का अत्यन्त उन्नत और व्यापक दृष्टिकोण है—जो आधुनिक विज्ञान की बहुधा संकल्पनाओं से मेल खाता है।

ऋग्वेद में कहा गया है कि इन्द्र की धुरा को दस वहनियाँ वहन करती हैं। इन दस वहनियों को अग्नियों का रूप माना गया है। यहाँ अग्नि कोई दहकने वाली लौ नहीं, बल्कि ऊर्जा का वैदिक प्रतीक है। वैदिक ऋषि ऊर्जा के विविध रूपों को अग्नि नाम से अभिहित करते हैं। इस प्रकार 'दश वहुनय:' में संकेत है कि ऊर्जा के दस प्रमुख रूप होते हैं, जिनमें जलीय ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा, घर्षण-जन्य ऊर्जा, पादपों से प्राप्त ऊर्जा, वायव्य ऊर्जा आदि का समावेश समझा जा सकता है। ऋग्वेद केवल यह बताता है कि इनकी संख्या दस है; परंतु उनके नाम नहीं गिनाता। आधुनिक विज्ञान भी इसी सत्य को स्वीकार करता है कि ऊर्जा अनेक प्रकार की है—यांत्रिक, रासायनिक, नाभिकीय, तापीय, सौर आदि। वैदिक ऋषियों ने इस विविधता

को अग्नि के अनेक रूपों के रूप में देखा था।

इसी संदर्भ में ऋग्वेद में इन्द्र के रथ के अश्वों की संख्या 2, 10, 30, 50, 60, 70, 80, 90 और 100 तक कही गई है। यह संख्या-भेद वास्तविक घोड़ों की गणना नहीं है। यह ऊर्जा की असंख्य, अनन्त और विविध तीव्रताओं की ओर संकेत है। ऊर्जा कहीं सूक्ष्मतम रूप में होती है, कहीं अत्यधिक प्रबल रूप में। रथ के अनेक अश्व ऊर्जा की इसी अनन्तता और बहुविधता का प्रतिरूप हैं।

यजुर्वेद और अथर्ववेद में अग्नि के जन्म की एक गूढ़ व्याख्या मिलती है। कहा गया है कि अग्नि **'अपाम् पितरः '**—अर्थात् अग्नि जल में निहित ऊष्मा है। इसका संकेत है कि जल में अग्नि का तत्व सदैव मौजूद रहता है। जैसे दही के मथने से घी और दूध के मथने से मक्खन निकलता है, वैसे ही घर्षण या मन्थन से जल में स्थित ऊष्मा बाहर प्रकट होती है। इस तरह वैदिक साहित्य में जल को अग्नि का मूल माना गया है। यह ऊर्जा-विज्ञान का अत्यंत सूक्ष्म बोध है, जिसके अनुसार जल-कणों की आन्तरिक गतिज ऊष्मा ही अग्नि का मूल है।

अथर्ववेद में अग्नि के स्थान आठ माने गए हैं। इन मंत्रों में बताया गया है कि अग्नि—अर्थात् ऊर्जा—जल में, पत्थरों में, औषधियों और वनस्पतियों में, पशु-पक्षियों और मनुष्यों में, सभी द्विपाद और चतुष्पाद प्राणियों में, द्युलोक में, पृथिवी और अन्तरिक्ष में, विद्युत् में तथा वायु में विद्यमान है। इसका तात्पर्य यह है कि सृष्टि का ऐसा कोई अंग नहीं जहाँ ऊर्जा का वास न हो। अथर्ववेद यह भी कहता है कि ऊर्जा द्युलोक, अन्तरिक्ष, पृथिवी, विद्युत् और वायु में लगातार प्रवाहमान रहती है। इससे यह सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक कण ऊर्जा से युक्त है, चाहे वह प्रकट हो या गुप्त। जहाँ कहीं घर्षण होता है—वहाँ ऊर्जा का रूप, विशेषतः विद्युत-ऊर्जा अनिवार्य रूप से उत्पन्न होती है। यह आधुनिक भौतिकी के सिद्धांतों से पूर्णतः मेल खाता है।

तैत्तिरीय संहिता में ऊर्जा से सम्बद्ध अनेक यन्त्र वर्णित हैं। वात-यन्त्र वह यन्त्र था जो वायु को उत्पन्न या नियंत्रित करने तथा उसके दाब को मापने के लिए प्रयुक्त होता था। ऋतु-यन्त्र तापमान को मापने और ऋतु-परिवर्तन को समझने के लिए था, जिसे आधुनिक थर्मामीटर की आदिम संकल्पना भी माना जा सकता है। दिशायन्त्र दिशा ज्ञात करने का उपकरण था, जिसे आज के कम्पास का प्राचीन रूप माना जा सकता है। तेजस-यन्त्र वह यन्त्र था जो प्रकाश या तेज उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त होता था। इन उल्लेखों से स्पष्ट है कि वैदिक काल में यन्त्र विज्ञान का भी विकास था और ऋषि ऊर्जा-तत्वों को मापने और नियंत्रित करने के लिए साधन बनाते थे।

यजुर्वेद में यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्धांत कहा गया है कि सृष्टि में जल और अग्नि का चक्र निरंतर चलता रहता है। जल से अग्नि, अग्नि से जल—यह चक्र सृष्टि की आधारभूत क्रिया है। जल अग्नि को जन्म देता है और अग्नि पुनः जल के रूपांतरण का कारण बनती है। प्रकृति का यह निरन्तर परिवर्तन ही विश्व के अस्तित्व का आधार है।

यजुर्वेद बताता है कि अग्नि ही सृष्टि का केतु—अर्थात् प्रकाश, चेतना और ऊर्जा देने वाला मूल तत्त्व है। वही द्युलोक और पृथिवी को भरता है, वही वनस्पतियों का गर्भ है और संसार का आधार है। ऊर्जा के इसी वैश्विक महत्व को वैदिक ऋषियों ने अग्नि-रूप में प्रतिष्ठित किया है। अग्नि केवल अग्नि-कुण्ड

की ज्वाला नहीं, बल्कि वह विश्वव्यापी चेतन–ऊर्जा है जो सम्पूर्ण चराचर को गति प्रदान करती है।

निष्कर्षत: वेदों में अग्नि को लौ नहीं, बल्कि सर्वव्यापी ऊर्जा माना गया है। यह ऊर्जा जल, वायु, अन्तरिक्ष, पृथिवी, वनस्पतियों, पशु–पक्षियों और मनुष्य—सबमें विद्यमान है। जल के मन्थन, वृक्षों के घर्षण और पत्थरों की रगड़ से अग्नि (ऊर्जा) के प्रकट होने का वर्णन वैदिक विज्ञान की उन्नत समझ दर्शाता है। ऋषि अथर्वा को अग्नि और जल–विद्युत के आविष्कार का श्रेय मिलता है। वेद बताते हैं कि ऊर्जा के अनेक रूप हैं—जलीय, भूगर्भीय, सौर आदि। जल और अग्नि एक दूसरे के पूरक हैं और सृष्टि उनका चक्र है। अंतत: अग्नि ही विश्व की गति, चेतना और संरचना का मूल आधार है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *Vedic Science of Energy by Dr. Satya Prakash Saraswati I.K. International Publishing House Ltd. New Delhi (2017)*
2. *The Vedas : An Introduction to Hinduism's Sacred Texts by Roshen Dalal Penguin Random House India New Delhi, 2014*
3. *Vedic Chemistry and Energy by Bibekananda Ray, D.K. Printworld Ltd., New Delhi, 2010*
4. *Ancient Indian Science : Vedic Innovations in Energy and Technology by Subhash Kak, Vitasta Publishing Pvt. Ltd. New Delhi, 2015*
5. *'Energy and Consciousness : The Vedic Perspective' by Swami Devananda, Motilal Banarsidass Publishers, Delhi, 2012*
6. *'The Rigveda : A Historical Analysis' by Shrikant Talageri, Aditya Prakashan, New Delhi, 2000*